

# भक्त नामदेव जी की वाणी में आदर्श मनुष्य का संकल्प

## डा. सोनदीप मोंगा

सहायक आचार्य, सरकारी कॉलेज रूपनगर

### Abstract

Namadeva was a great saint of India. Namadeva was one of the most famous poet saints of the thirteenth and fourteenth century. He was the composer of hundreds of 'abhangs' (devotional songs). Even today, devotees can be seen singing the beautiful abhangs of Namadeva. In his songs he give detailed characteristics of ideal human being. He told about the God and his greatness. Everybody should dedicate his karmas to God. A person should help others, speak truth etc.

Key words: Namadeva, Abhangs.

सृष्टि के सत्य की दो विशेषताएं, दृष्टिमान्यता और पारगामिता सदैव विचार-विर्मश का विषय रहीं हैं। वास्तव में उस तृष्णामयी हिरन की तरह इस कायनात के दर्शनीय सौन्दर्य से मनुष्य सदैव ही आनन्द विभोर होता रहा है और इस के अन्तःकरण में अदृश्य शक्ति की तलाश करता रहा जो निश्चित रूप में उसके भीतर ही विद्यमान है जिसकी सर्वव्यापकता एक सत्य है। शायद मनुष्य की यही गुस्ताखी और नीचता के कारण विश्व की ज्ञान संचार परम्परा में आदर्श का सिद्धांत अंकित किया गया है। जो सदैव उसे याद दिलाता है कि सर्वव्यापकता की धुरी उसकी व्यक्तिगत चेतना है। क्यों कि वह हिरन नहीं मनुष्य है उसमें बुद्धियुक्त चेतना है जिसके द्वारा वह इस कस्तुरी को प्राप्त कर सकता है। मनुष्य जब से इस सृष्टि पर है तब से उसके सांसारिक मूल को जानवरों और बाकी प्राकृतिक जीवों से अलग करके देखा जाता रहा है। विज्ञान, मनुष्य की भौतिक संरचना की शक्ति का गवाह है परन्तु मानव चेतना की सतह तक नहीं पहुंच पाया। डा. राधाकृष्णन मानव चेतना के इस अनूठे सत्य को वर्णित करते हुए लिखते हैं 'मानव वास्तव में भिन्न तरह का अद्भुत प्राणी नहीं। उसकी संरचना के भीतर उसके मूल स्रोत के चिन्ह मौजूद हैं। उसके शरीर की दुर्बलता, उसके जीवन की मर्यादा और उसके मन का अन्तःकरण का बंधा रहना। वह भौतिक प्राणयुक्त एवं जन्तुओं के जीवन से विकसित हो कर मानव रूप में बना है। वह विश्व – प्रकृति का एक भाग है। प्रकृति की सदैवकालीनता से काट कर तराशा गया जीवन का समस्त है। जैसे जीव जन्तु मानव का निम्न रूप नहीं, वैसे ही मानव केवल जीव जन्तुओं का विकसित रूप नहीं। दोनों में एक खाई सी है। जितना भी वैज्ञानिक मूल्यांकन किया जाए इस हैरान पूर्ण परिवर्तन का विस्तार नहीं हो सकता।'<sup>1</sup>

वास्तव में मानव चेतना के विस्फोटक लक्षण, ज्ञान विश्लेषण दर्शन शास्त्र करता है। भारतीय परम्परा में इसका आरम्भ वेदांत के ब्रह्मवाद से हुआ है। जिसमें ब्रह्म, दैवी

उपासना, मानस कल्प और ज्ञान उभरते हैं। मानव प्राप्ति की यह पहली सीढ़ी थी। वेदों में परमात्मा की कल्पना बहुत स्पष्ट तो नहीं मिलती लेकिन उसकी सत्ता पूर्ण रूप में स्पष्ट है। 'सबसे पहले केवल परमात्मा थे, सबके अदुती मालिक थे, परमात्मा से ही सभी देव उत्पन्न हुए और उन्होंने पृथ्वी और आकाश को अपने-अपने स्थान पर स्थापित किया।'<sup>2</sup> वेदों में जिस धर्म का ब्यान मिलता है वह प्राकृतिक तत्त्वों को सजीव मानने वाले भावमय मनुष्य का धर्म है। वेदकालीन मनुष्य का विश्वास था की प्रकृति की प्रत्येक शक्ति एक देवता के अधीन कार्य करती है और उसी देवता की पूजा करने से मनुष्य का कल्याण होता है। ऋग्वेद के अनुसार 'परमात्मा सभी सुखों का स्रोत है चाहे उसकी प्राप्ति कोई सरल काम नहीं, पर इसके साथ ही सभी दुखों के बंधन टूटते हैं और परमात्मा के ज्ञान के द्वारा ही मनुष्य मोक्ष प्राप्त कर सकता है, यही उसका उत्तम कर्म है सत्यकर्मी मनुष्य सही अर्थों में मनुष्य कहलाता है।'<sup>3</sup> उपनिषद आत्मा और परमात्मा को आदर्श रूप में एक मानते हैं। इनमें इस सर्वव्यापकता की तुलना आकाश से करके संपूर्ण जीवन दर्शन का सार प्रस्तुत किया गया है की जैसे घुमार कोई घड़ा बनाता है, तो आकाश का एक भाग उस घड़े में व्यापक हो जाता है। घड़ा शरीर है और घड़े के भीतर व्यापक आकाश आत्मा है। जब घड़ा टूट जाता है तो उसमें बन्धा आकाश फिर बड़े आकाश में मिल जाता है। जिस घड़े का आकाश कर्म की गंध से दूषित है, वह आकाश के भाग 'आत्मा' को फिर किसी दुसरे घड़े में समाना पड़ेगा भावार्थ पूनर जन्म लेना होगा, पर जिस का आकाश स्वच्छ है वह जिस की आत्मा निर्मल है वह टूट जाने पर भी उस का आकाश फिर घड़े में वापिस नहीं आता। निर्मल मनुष्य की आत्मा पूनर जन्म में नहीं आती।<sup>4</sup> उपनिषद बयान करते हैं कि दृश्य संसार के पीछे सत्य छुपा हुआ है, पर वह सोने के पात्र से ढका हुआ है। माया के आवर्ण को हटाने से पुरुष को वह सत्य दिखाई पढ़ता है और वह परमात्मा से मिलान का अनुभव कर सकता है। इस 'विद्या पुरुष' को प्राप्त करके वह विद्वमान नामरूप रहत होकर मुक्त हो जाता है। इस तरह पारब्रह्म को जानने वाला सवैम ब्रह्म हो जाता है।<sup>5</sup>

शंकराचार्य के 'मायावाद' दर्शन में इस सृष्टि को केवल माया बताया गया है कि यह संसार केवल मानव चित्त की ही कल्पना है। गीता में मनुष्य की मुश्किलों के समाधान के लिए मानव मन के संतुलन को पेश किया गया है भाव जो कर्म में अकर्म, अकर्म में कर्म को देखता है वह मनुष्यों में बुद्धिमान हे, यह योगी है और समस्त कर्मों को करने वाला है। समाज में आदर्श पुरुष जो कर्म करते हैं साधारण व्यक्ति उनका ही अनुकरण करते हैं।

भारतीय चिन्तन परम्परा में छः दर्शन वेदांत, मीमांसा, सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक का वर्णन है कि आत्मिक ज्ञान के द्वारा ही ब्रह्म ज्ञान प्राप्त हो सकता है। ब्रह्म में

विश्वास करना ही आदर्श मनुष्य का ज्ञान स्रोत है। Max Muller Friendrich अपनी पुस्तक 'The Six Systems of Indian Philosophy' में ब्रह्म विश्वास के बारे में लिखते हैं 'सत्य और ब्रह्म हमारे भीतर हैं चाहे हम इन्हे अलग नहीं कर सकते जैसे एक पिता अपने पुत्र को कह रहा है कि पानी में नमक फेंक कर देखे और कुछ समय बाद उसको वापिस निकाले। निः संदेह वह ऐसा नहीं कर पाएगा पर जब भी उसका स्वाद चखेगा तो नमकयुक्त होगा। ऐसे ही पिता ने पुत्र को समझाया कि सत्य और अध्यात्म हमारे भीतर हैं चाहे हम उसे इस तरह नहीं समझ सकते पर अनुभव अवश्य कर सकते हैं।'<sup>6</sup>

आदर्श मनुष्य के लिए धर्म में विश्वास ही इस और प्रयत्न है। इसके अन्तरगत सिद्धांत रूप में कुछ मानसिक विधियों को दर्शाया गया है, जो आदर्श बनने में सहायक होती है जैसे विषय, समस्या, पूर्वपक्ष, सिद्धांत और संगती<sup>7</sup> के विशेष सुत्र। आत्म ज्ञान के लिए प्रत्यक्षण, अनुमान, व्याप्ती उपमा अर्थावती शब्द और अभाव जैसे संकल्प दिये। धर्म प्राप्ति के लिए 'शब्द' को प्राथमिकता दी गई। सांख्य दर्शन में तीन तरह के दुखों की निवृत्ती को परम पुरुषार्थ माना गया है जो प्राकृतिक ज्ञान के रूप में हैं जैसे हमारे समस्त ज्ञान का मूल और पहचान संसार की उत्पत्ति के ज्ञान रूप में है।... इस लिए पुरुष की अन्तर दृष्टि से प्रकृति निर्मित होती है जो बुद्धि के तौर पे विकसित होती है, अक्सर ज्ञान में अनुवादित होती है पर वास्तव में यह एक तरह का प्रत्यक्षण है, जिसे विवेक कहते हैं।<sup>9</sup> इसी विवेकपूर्णता से आदर्श मनुष्य के लिए प्रकृति की स्थूल वस्तुएं भी ज्ञानयुक्त हो जाती हैं। यही संकल्प एक विशाल धार्मिक परम्परा का सृजन करती है। एस. राधा. कृष्णन भी लिखते हैं 'वास्तविक दृष्टि से देखा जाए तो धर्म एक पूर्ण पुरुष और पूर्ण संसार के सम्बन्ध में अपने विचारों को प्रकट करने का मानवी प्रयत्न है। मनुष्य की दृष्टि में वही देवता है, वैसे ही आदर्श प्राणी हैं, जैसा वह खुद बनना चाहता है। मनुष्य की अपनी कमजोरी ही उसे शक्ति के प्राकृतिक स्रोत की तरफ देखने को मजबूर करती है। हम धर्म को उसकी व्यवहारिक उपयोग की दृष्टि से अपनाते हैं।'<sup>10</sup>

भारत में हिन्दु धर्म ने मनुष्य को व्यक्तिगत और सामाजिक तौर पर नैतिक मान्यता के रूप में व्यवहारिक आदर्श प्रदान किये जो दिन – प्रतिदिन जीवन के लिए एक विशेष अनुशासन निर्धारण करते हैं। जैन धर्म में मुक्त जीव ही अनन्त ज्ञान वाला, अनन्त शक्ति वाला और अनन्त गुणों वाला होता है। बौद्ध धर्म में जीव आत्मा की शुद्धता और उचित आचार पर बहत बल दिया गया है। मानव जीवन की चार मूल सच्चाईयों का वर्णन करके बौध्म दर्शन ने जीवन मार्ग को 'अष्ट मार्ग' के तौर पर दर्शा कर उत्तम आदर्शों का प्रेरणा स्रोत स्थापित किया। इस में सम्यक् दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक् वचन, सम्यक् कर्म, सम्यक् जीविका, सम्यक् यत्न, सम्यक् स्मृति और सम्यक् समाधि की पूर्ण आदर्श सामग्री डाल कर उच्च जीवन जांच का

पालन करने का नियम पेश किया। इसाई धर्म के बाईबल में मानव नैतिकता को अध्यात्मकता का सार बताती है कि 'परमात्मा ने मनुष्य को अपनी रुचि के अनुसार आदर्श बिम्ब की तरह सृजन किया है... इससे यह कहना सम्भव है कि विचार और शब्द दरसाते हैं कि परमात्मा ने सभी जीवों को ऐसे तराशा है कि वह एकमात्र परमात्मा के प्रतिबिम्ब हैं और धरती पर उसके प्रतिनीधि है। परमात्मा अपने आप को मनुष्य के तौर पर ज्ञात करवाता है और मनुष्य केवल परमात्मा के साथ रिश्ता बनाए रखने में ही जीवन सम्पूर्णता प्राप्त कर सकता है।<sup>11</sup> इस्लाम के सारे सिद्धांत कुरान शरीफ में है। इस धर्म शास्त्र में भी जीव को धरती पर परमात्मा का प्रतिनीधि बताते हुए उसे 'खलीफ' ब्यान किया गया।

इस लिए धर्म एक ऐसा दर्पण एवं आदर्श है जिसमें हम अपनी सारी नैतिक क्रियाएँ देख सकते हैं। सिक्ख धर्म में सदाचार की सामाजिक सार्थकता का भी विवेचन मिलता है यही कारण है कि यह व्यक्तिगत आदर्शवाद से ऊपर उठकर सामाजिक क्षेत्र को भी प्रभावित कर पाया। गुरुमत दर्शन में 'किव सचिआरा होईअै' के मूल प्रश्न के प्रतिउत्तर में आदर्श मनुष्य की नई सकल्पना सामने आई जिसको 'सचिआर' के तौर पर ब्यान किया गया। कुलदीप सिंह हऊरा लिखते हैं 'सचिआर मनुष्य का आचार सदा ही नमुने का होता है, वह आचार ही सदाचार कहलाता है, जिस को संसारिक लभ लोभ एवं दुख दर्द गिरा नहीं सकते।<sup>12</sup> गुरुनाम कौर बेदी भी लिखते हैं गुरुबाणी ने मनुष्य को ऊँचे सच्चे सचिआर मुल्यों को अपनाने के लिए प्रेरित किया है।<sup>13</sup>

सिक्ख धर्म का आदर्श मनुष्य सचिआर अकाल पुरख के स्वरूप को सामने रख कर आराधना करता है जो आदि, जुगादि, अकाल, अगम्म, अगोचर, अजूनी, सैभन्ना, निर्भऊ, निरवैर, करता, सृजक दाता और रक्षक है। इस तरह अकाल पुरख का स्वरूप चिन्तन और गुण कथन की अध्यात्मक अनुभूति के विशेष रूप में विचारा गया है और मानव चेतन शक्ति की पहुँच से दुर भी नहीं दिखाया गया। साथ ही मनुष्य को सामाजिक प्राणी मानते हुए यह विचार भी पेश किय गया है कि निरंतर जोवन संघर्ष ही इस का निर्वहन है। सिक्ख धर्म के आदर्श मनुष्य को यह ताकीद की गई है कि वह इस संसार को 'सच्चे की कोठड़ी' समझकर इस में रहते हुए भी माया से दुर रहे। यह संसार त्याग और कर्मविहीन होने को खंडित करता है। 'नाम जपने' से पालना करने का आदर्श 'किरत करने' का है। गुरुबाणी में इस लिए मनुष्य को इस समस्त सृष्टि के उत्तम प्राणी के तौर पर मान्यता दे कर 'सरदार' कहा गया है।

अवर जोन तेरी पनिहारी  
इस धरती मह तेरी सिरदारी<sup>14</sup>

सिक्ख धर्म आदर्श मनुष्य को 'गुरुमुख' के तौर पर पारिभाषित करता है और अज्ञानी को 'मनमुख' की संज्ञा देता है। 'गुरुमुख' को सत्यवादी और सदगुणी हंस माना गया है और मनमुख को कऊए की भांति ना काबिल और विशेष सुझ के बिना ब्यान किया है। गुरुबाणी में यह विशेष अन्तर सामाजिक मूल्यों के पैटरन सृजन करता है। यही सिक्ख आदर्शक मनुष्य का माडल है जो सहज स्वभाव को एक तरफ ब्रह्म के साथ और दुसरी तरफ संसार के साथ बांधता है। जीवन संसार ओर ब्रह्म का एकात्म करता है। इस की प्राप्ति दुलर्भ परन्तु आवश्यक जताई गई है। जिस के लिए पाँच मूलभूत बुराईयों, काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार को वर्जित बताया गया है। सामाजिक व्यवहार के तौर पर 'सभे सांझीवाल सदायन' को अपनाना आवश्यक है। इसमें वर्ण विवस्था के लिए कोई स्थान हीं, गुरु अर्जन देव जी ने सिक्ख धर्म के ग्रन्थ आदि ग्रन्थ का सम्पादन करते समय इस प्रथा का खुल के खंडन किया। इसमें छः गुरु साहिबान की बाणी के अतिरिक्त समस्त हिन्दुस्तान के विभिन्न राज्यों, धर्मों, जातिओं को मानने वाले भक्तों, फकीरों और भट्टों की बाणी दर्ज है। छतीस बाणीकारों की रचना को स्थान दे कर उन्होंने समदृष्टिता को उज्वल आदर्श को सिक्ख आदर्शों का भाग बनाया। इस तरह उन्होंने सिक्ख की हस्ती में रूहानी नूर की ज्ञान प्रकाशवानता को स्थापित करके सांप्रदायकता पर चोटी की।

गुरमत के इन बाणीकारों में भक्त नामदेव जी ने निगुर्ण भक्ति दर्पण में बड़ा ही उज्वल तस्वर पेश किया जो आत्मा से परमात्मा की दृष्टि एवं जीवन से परम पुरुख का तस्वर है। भक्त नामदेव जी अपने अकोदे को ब्रह्माण्ड के कण कण में रमता हुआ अनुभव करते हैं और ऐसे ही मजाज्ञान का प्रत्यक्षण करवाते हुए वह अपनी बाणी में लिखते हैं:

सब गोबिन्द है सब गोबिन्द है  
गोबिन्द बिन नहीं कोए।<sup>15</sup>  
इभै बिट्ठल, उभै बिट्ठल  
बिट्ठल बिन संसार नहीं।<sup>16</sup>

नामदेव जी के अनुसार यह ब्रह्मन्ड की जुगत में जैसे माटी से घड़ा बनता है वैसे ही जीव के भीतर ब्रह्म है। पर उसे यह पता नहीं है वह राग प्रभाती में वर्णीत करते हैं:

अकाल पुरुख इक चलित उपाया  
घट घट अन्तर ब्रह्म लुकाया  
जीअ की जोत न जानै कोई  
तै मै कीआ सु मालुम होई।<sup>17</sup>

इस तरह जीव की उत्पत्ति प्रमात्मा की आदर्शक सृजना है और प्रमात्मा का स्वरूप का प्रभाव मनुष्य की वास्तविक छवी एवं आदर्श का सृजन करता है। नामदेव जी इस को आनंद मुरत कहते हैं जैसे बावन (चंदन का वृक्ष) रूप वन में है, उस की सुगन्ध के साथ सुख प्राप्त हो रहा हो ऐसे ही हरी चंदन भी सभी जीवों को अपनी सुगन्ध से सुगन्धित कर रहा है। उनकी रचना दृष्टि में:

सर्व निरन्तर राम रहिया रव ऐसा रूप बखानया ॥

गोविन्ध गाजै शब्द वाजे, आनंद रूपी मेरो रामईया। रहाओ।

बावन बीख बानै बीखे बास ते सुख लागीला ॥<sup>18</sup>

परन्तु नामदेव जी के अनुसार विश्व के महाप्राणी को ज्ञान की तलब बहुत विचिलत करती है वास्तव में ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति दुर्लभ है। मनुष्य भी जीवन भर इसकी कामना में तड़पता है। वह इस के बारे में स्पष्ट करते हैं:

मोहे लागती ताला बेली  
बछरे बिन गाय अकेली  
पानीया बिन मीन तलफै  
ऐसे राम नामा बिन बापुरो नामा ॥<sup>19</sup>

इस तड़प का आदर्शक भक्ति के द्वारा शान्त किया जा सकता है। जो मनुष्य का संभव कर्म है। नामदेव जी की रचना में यह मार्गदर्शन दिया गया है:

नाद भ्रमे जैसे मृगाए ॥  
प्राण तजे वा को ध्यान न जाए ॥  
ऐसे रामा ऐसे हेरओ ॥<sup>20</sup>

नामदेव जी को मानव स्वभाव की गहन समझ थी। वह जानते थे कि मनुष्य अज्ञानता के कारन अनजान है, उस को गुरु कृपा की आवश्यकता है फिर मानव जीवन के दौरान ही उसके लिए स्वर्ग मार्ग खुल जाता है वह ध्रुव और नारद की उदाहरण देकर स्पष्ट करते हैं कि मनुष्य सदाचारक गुणों सहित नाम का धारणी हो तो पल भर में ही वह देवता बन सकता है। नामदेव जी स्वः चिन्तन और ज्ञानवान्ता के द्वारा मनुष्य को देवता स्वरूप होने की विधि समझाते हुए लिखते हैं:

नर ते सुर होए जात निमख में सतगुरु बुद्ध सिखलाई ॥

नर ते उपज सुरग कऊ जीतिओ सो अवखद मै पाई

जहाँ जहाँ धरु नारद टेकै नैक टिकावै मोहे ॥

तेरे नाम अविलम्ब बहुत जन उधरे नामे की निज मत ऐहे ॥<sup>21</sup>

भक्त नामदेव जी के मत्तानुसार प्रमात्मा सृष्टि के हर कण में रम रहा है उसके नाम सिमरत की पवित्रता महान है मनुष्य चाहे कितना भी दोषी व पापी हो अवगुणों की मलीनता ज्ञान रूप नाम से निर्मल हो जाती है। नामदेव जी ऐसे अनुभव को सतः संगत से प्राप्त हुआ मानते हैं:

कऊन को कलंक रहओ राम नाम लेत ही

पतित पवित भाए राम कहत ही

राम संग नामदेव जन को प्रतज्ञया आई ।<sup>22</sup>

गुरबाणी के अनुसार आदर्श मनुष्य के संकल्प में अवगुणों को रती भर भी निकट नहीं रखा गया। नामदेव जी भी ज्ञात करवाते हैं कि प्रमात्म गुणों का बहाव सृष्टि के किसी भी चश्में से प्रवाहित हो सकता है। एक बार नामदेव जी को एक मुगल ने दवारिका मे विगारी समझ कर पकड़ लिया। परन्तु नामदेव जी ने उस मुगल में भी हरी का रूप देखा और शब्द उच्चारण किया:

हल्ले यारा हल्ले यारा खुसखबरी

बल बल जाऊ हओ बल बल जाऊं

नीकी तेरी विगारी आले तेरा नाओ

असपत गजपत नरह नरिन्द

नामे के स्वामी मीर मुकन्द ।<sup>23</sup>

इस कथन के द्वारा वह सिद्ध कर रहे हैं कि प्रमात्मा की सर्वव्यापकता का अनुभव हर सांसारिक कर्म कांड से ऊंचा है। नामदेव जी के अनुसार अगर कोई अश्वमेघ यज्ञ करे अपने शरीर के भार के बराबर दान दे। प्रयाज्ञ राज तीर्थ में स्नान करे, तो भी यह कर्म हरी या प्रभु सुमिरन के तुल्य नहीं हो सकता। आदर्श मनुष्य के लिए सारे ही कर्म कांड व्यर्थ हैं उसके लिए तो एक ही उत्तम कर्म है प्रमात्मा की भक्ति और टेक। वह राग गोंड बाणी में फुरमान करते ह:

मन छोड़ी छोड़ी सगल भेदन

सिमर सिमर गोबिन्द

भज नामा तरस भव सिंधन ।<sup>24</sup>

इस से भावार्थ यह नहीं की मनुष्य को देवता बनने के लिए या आदर्शक ज्ञान अर्जित करने के लिए सांसारिक कर्मों का परित्याग करना पड़ेगा नहीं बलकि संसार में रहते, कर्म करते हुए भी वह नाम ज्ञान पा सकता है जैसे मां का बालक की तरफ, पतंगबाज का पतंग की तरफ, सुनार का, गवाले का, गागर भर रही लड़की का ध्यान एकाग्र होता है, उसी तरह हर मनुष्य का ध्यान प्रमात्मा की तरफ होना

चाहिए वह इस जीवन रहस्य को बड़ी सुन्दर और सरल उदाहरणों के साथ ब्यान करते हैं:

आनीले कागद काटीले गूडी आकास मधे भरमीअले  
 पंच जना सिओ बात बतुआ चीत सु डोरी राखीअले।  
 मन राम नामा बेधीअले।  
 जैसे कनिक कला चित माडीअले। रहाओ।<sup>25</sup>

नामदेव जी इस गुरमत के नेम को प्रत्येक व्यक्ति को ताकीद करते हैं की मनुष्य को शरीर साधने के बजाए मन की साधना पर ध्यान देना चाहिए यही महा ज्ञान है। वह गुरु आदेश के अनुसार एकाग्र ध्यान समाधि लगाने को उत्तम कर्म मानते हुए लिखते हैं:

अठसठ तीर्थ गुरु दिखाए घट की भीतर नाऊगो।  
 पंच सहाई जन की सोभा भलो भलो न कहावोगो।।  
 नामा कहै चित हर सिऊं राता सुन्न समाध समाओगो।।<sup>26</sup>

इस मन की साधना जुगत कैसी है इस का विस्तार नामदेव जी करते हैं। वह खुद भी ललारी और दर्जी का काम करते थे लेकिन साथ मन को हरी सुमिरन में लगाए रहते थे वह इस अनुभव की परिष्कृत ब्यान करते हुए लिखते हैं:

मन मेरो गज जीहबा मेरी काती  
 मप मप काटो जम की फासी  
 राम नाम बिन घरीए न जीवो  
 आठ पहर अपना खस्म धिआवो।<sup>27</sup>

परन्तु यह मनो ध्यान तभी आदर्शक ज्ञान में परवर्तित होगा जब मन की खोट और दिखावे की रूची मिटेगी। यह आदर्शक मनुष्य के लिए कठोर रूप में ताकीद करते हैं:

काहे को कीजै ध्यान जपना  
 जब ते सुद्ध नाही मन अपना।<sup>28</sup>

नामदेव जी प्रमात्मा के आगे प्राथना करते हैं कि इन ज्ञान विहिन मनुष्यों को भव सागर से पार कर ले, प्रभु कृपा से तो पत्थर – कंकर भी तैर जाते है यह तो फिर भी मनुष्य हैं जो प्रभु से आदर्शक डोरी बांध सकते हैं। वह सुन्दर वर्णन करते हैं:



देवा पाहन तारीअले

राम कहत जन कस न तरे।<sup>29</sup>

नामदेव जी मनुष्य की भ्रम रहत अवस्था भी ब्यान करते हैं जहां पर गुमान एवं अंहकार का पर्दा हट जाता है। वह लिखते हैं:

सतगुरु मिलै त सहसा जाई

किस हऊ पुजो दुजा नदर न आई।<sup>30</sup>

इस को वर्णीत करते हुए हकीकत सिंघ प्रेमी लिखते हैं 'भक्त नामदेव जी ने लोगों को प्रभु भक्ति की और लगने की प्रेरना दी। आप के अनुसार प्रभु पत्थर की मुर्तियों में नहीं बलकि वह तो सर्वव्यापक है .... भक्त नामदेव ने सभी इन्सानों को एक सामान माना उनके अनुसार हिन्दु, मुस्लमान, ब्राह्मण और शुद्र के भेद व्यक्ति के अपने ही बनाए हुए हैं। उसने तो केवल इन्सान को ही पैदा किया है .... सामाजिक मुल्यों को बरकरार रखते हुए आप ने एक सत्य के होने को ही स्वीकार किया। हम सभी की मंजिल भी एक ही सत्य पर चल कर सत्य की प्राप्ति।<sup>31</sup> इस तरह मनुष्य अपने जीवन के प्रति स्पष्ट हो जाता है वह कहते हैं:

जो राज दे त कवन वडाई

जो भीख मंगवाए त क्या घट जाई।<sup>32</sup>

यह एक उच्चतम आदर्शक अवस्था हैं जिससे वह वारे – वारे जाते हैं और ऐसे मनुष्य के दर्शन भी नहीं करना चाहते जो हरी भजन नहीं करते। इस लिए वह सांसारिकता की उलझन से दूर रह कर, वाद विवाद में रुचि नहीं रखते। रघुबीर सिंघ भारत इस रुचि के बारे में विचार प्रस्तुत करते हैं 'भक्त नामदेव जी की बाणी का मुख्य उदेश्य सृजनहार के साथ अभेदता एवं नैतिक मुल्यों पर बल देना है तांकी सांसारिक जीव एक गुरुमुख की भांती इस संसार में अच्छे नागरिक के रूप में अपना जीवन वतीत करता हुआ, एक सुन्दर और तन्दुरुस्त सामाज बना सके।<sup>33</sup> करनजीत सिंघ भी इसी तथ्य की पुष्टी कर रहे हैं की 'जब हम नामदेव की बाणी में आदर्श मानव का संकल्प विषय पर विचार करते हैं .... तो हम उस मानव को पहचानने का प्रयत्न करते हैं जो रचनाकार की दृष्टि में पशु नहीं, वह ता प्रभु का भक्त है। साधु सन्तों में बैठने वाला है, वह भगवान को सदैव याद रखता है और उसी के साथ अभिन्न रहता है। ऐसे प्रमात्मा के साथ उसका बन्धन होता है जिसका संग उसको सांसारिक रुचियों से पार करके, पशु बृत्ती से हटा कर, त्याग की, सबर की सेवा की भावना प्रदान करता है। प्रभु के संग ऐसी प्रीत मनुष्य को भीतर से पूरा बदल के रख देती है। उसके भीतर एक आवश्यक और मानसिक क्रांति घटित हो जाती है।<sup>34</sup> नामदेव जी इस आदर्श मनुष्य की संकल्पना को जीवन क्रांति के रूप में ब्यान करते हैं:

## हर नाम जाती हर नाम पाती हर नाम सफल जीवन में क्रांति<sup>35</sup>

### सहायक स्रोत

1. डा. एस, राधा कृष्णन, जीवन दा आदर्शवादी दृष्टिकोण (अनु:) प्रभजोत कौर, पब्लीकेशन ब्योरौ, पंजाबी यूनिवर्सिटी पटियाला, 1988, पृष्ठ 236
2. रामधारी सिंह दिनकर, सम्प्याचार के चार अध्याय (अनु:) धनवन्त कौर और इन्द्रजीत कौर, पब्लीकेशन ब्योरौ, पंजाबी यूनिवर्सिटी पटियाला, 1992, पृष्ठ 130
3. सुरेन्द्र कुमार ऋग्वेद में विविध विद्याएं, संजय प्रकाशन, दिल्ली, 200, पृष्ठ 301
4. रामधारी सिंह दिनकर, सम्प्याचार के चार अध्याय, पृष्ठ 130
5. आर.डी. निराकारी (अनु:) प्रधान उपनिषद, पब्लीकेशन ब्योरौ, पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला, 1992, पृष्ठ 120
6. Max Muller Freidrich, The Six Systems of Indian Philosophy, Associated Publishing House, New Delhi, 1982, P. 182.
7. Ibid, 190
8. Ibid, 189
9. Ibid, 264 - 265
10. डा.एस, राधा कृष्णन, जीवन दा आदर्शवादी दृष्टिकोण, पृष्ठ 22
- 11- P. John, Mathew and others, Christianity, Publication Bureau, Punjabi University, Patiala, 2000, P. 31.
12. कुलदीप सिंघ हऊरा, सिक्ख नैतिकता दी रूप रेखा, सिमर साहित्य सदन, अमृतसर 1992, पृष्ठ 50
13. गुरनाम कौर बेदी, गुरमत विवेचन, रूही प्रकाशन, अमतसर, 1994, पृष्ठ 9
14. आदि ग्रन्थ, पृष्ठ 314
15. वही, पृष्ठ 495
16. वही, पृष्ठ 485
17. वही, पृष्ठ 135।
18. वही —
19. आदि ग्रन्थ, पृष्ठ 874
20. वही, पृष्ठ 873
21. वही —
22. आदि ग्रन्थ, पृष्ठ 718
23. वही, पृष्ठ 727
24. वही, पृष्ठ 873
25. वही, पृष्ठ 972
26. वही, पृष्ठ 972—973
27. वही, पृष्ठ 485
28. वही —
29. वही, पृष्ठ 345
30. वही, पृष्ठ 525
31. हकीकत सिंघ प्रेमी, भक्त नामदेव एक सच, भाई चतर सिंघ जीवन सिंघ, अमृतसर 2003, पृष्ठ 18
32. आदि ग्रन्थ, पृष्ठ 525
33. रघबीर सिंघ भरत, भक्त नामदेव (चिन्तन ते अनुभव) लाहौर बुक शाप लुधियाना, 2009, पृष्ठ 62
34. करनजीत सिंघ, नामदेव बाणी में मानव का संकल्प, विस्माद नाद विशेष अंक, इन्टरनेशनल इन्सिचिऊट आफ गुरमत स्टीडिज लुधियाना, जनवरी 1994 पृष्ठ 550
35. आदि ग्रन्थ।